देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयताम्।। ऋ० १/८९/२

ISSN : 2395-7115
नवम्बर 2024
Vol.-20, Issue-5(2)
Impact Factor 7.523

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

वैश्वीकरण के दौर में बदलती सामाजिक व्यवस्था

Guru Nanak Girls College
Sant Pura Yamuna Nagar

विशेषांक सम्पादक :
डॉ. गीतू खन्ना,
डॉ. अमनदीप कौर

सम्पादक :
डॉ. नरेश सिहाग
एडवोकेट

Publisher :
Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

अनुक्रमणिका - नवम्बर 2024

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ
1.	सम्पादकीय	डॉ. गीतू खन्ना, डॉ. अमनदीप कौर	11-11
2.	शुभकामना संदेश		12-15
3.	हिन्दी साहित्य में नारी चित्रण	डॉ. गीतू खन्ना	16-22
4.	वैश्वीकरण के दौर में भारतीय शिक्षा संस्कृति और साहित्य	डॉ. शक्ति बुद्धिराजा	23-27
5.	वैश्वीकरण के दौर में साहित्य में चित्रित परिवर्तित होता पारिवारिक ढांचा	डॉ. अंजू बाला	28-35
6.	वैश्वीकरण का अवधारणात्मक विकास व महिला सशक्तिकरण	संदीप कौर	36-39
7.	वैश्वीकरण के दौर में विखंडित होते जीवन और मानवीय मूल्य : हिन्दी उपन्यासों के सन्दर्भ में	डॉ. अमनदीप कौर	40-45
8.	वैश्वीकरण के दौर में साहित्य में वर्णित वर्तमान भारतीय शिक्षा व्यवस्था	मिस दीपमाला	46-50
9.	वैश्वीकरणसमये वेदमिहितसामाजिकसिद्धान्तविचारः	अजित कुमार नायक	51-54
10.	साहित्य में वैश्वीकरण का प्रभाव : शरद जोशी और रवींद्रनाथ त्यागी के व्यंग्यात्मक दृष्टिकोण का विश्लेषण	अर्चना बारटक्के	55-60
11.	वैश्वीकरण के दौर में विखण्डित होते जीवन मूल्य 'गिलिगडु' उपन्यास के संदर्भ में	बीना मीणा	61-64
12.	वैश्वीकरण के दौर में दिविक रमेश के बाल कथा साहित्य में चित्रित बाल समस्याएं	दीपिका चौहान, डॉ. रीता सिंह	65-69
13.	वैश्वीकरण के दौर में साहित्य में वर्णित वर्तमान भारतीय शिक्षा व्यवस्था	धीरेंद्र प्रताप सिंह और	70-76
14.	The Impact of Technology on Mental Health of Young Adults : A Systematic Review	Ms. Divya Rathi, Dr. Nirupma Saini, Dr. Vandana Singh	77-84
15.	वैश्वीकरण के दौर में साहित्य में वर्णित वर्तमान भारतीय शिक्षा व्यवस्था	डॉ आदित्य प्रकाश	85-89
16.	वैश्वीकरण के दौर में साहित्य में वर्णित वर्तमान भारतीय शिक्षा व्यवस्था	डॉ. अमिता रेड्डू	90-97
17.	भूमण्डलीकरण और हिन्दी भाषा	डॉ० चन्द्रा खत्री, डॉ० आशा हर्बोला	98-100

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 7.523

Bohal Shodh Manjusha
Nov. 2024

ISSN : 2395-7115
Page No. : 23-27

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

वैश्वीकरण के दौर में भारतीय शिक्षा संस्कृति और साहित्य

डॉ. हाकिम

प्रवक्ता, स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग, गुरु नानक गर्ल्स कॉलेज, संतपुरा, यमुनानगर।

साहितस्य भावं साहित्यम् कथन के अनुसार सत् साहित्य में 'सर्वजन हिताय और सर्वजन सुखाय' का भाव होना अवश्यंभावी है। विधाता की सृष्टि में मानवीय गुण धर्म के आधार पर मनुष्य को अभ्युदय का अवसर मिला है। मनुष्य सर्वाधिक चिंतनशील प्राणी है। सामाजिक प्राणी होने के कारण अपनी उन्नति के साथ सामाजिक प्रगति का चिन्तन स्वाभाविक है। सृष्टि में उत्थान पतन, अनुकूल प्रतिकूल, हर्ष विषाद, दिन–रात का चक्र निरन्तर चलता रहता है। यदि इस चक्र की गति के बाधित हो जाने से अंधकार क्रमिक विकास रुप से गहराता दिखाई दे, तो यह स्थिति विचारणीय और चिन्तनीय हो जाती है।

भारतीय संस्कृति परिवर्तन के साथ निरन्तरता बनाए हुए चलती है। हमारी संस्कृति उन तत्वों को सतत् परिवर्तित करती रहती है जो युग अनुरुप आवश्यक नहीं हैं। इतिहास के पन्ने निरन्तर बदलते रहें अनेक आन्दोलन विकसित हुए, अनेक उतार चढ़ाव आए, बदलाव आए। छठी शताब्दी ईसा पूर्व जैन और बौद्ध के उदय और आधुनिक भारत में अठारहवीं और उन्नीसवीं शताब्दी में हुआ नवजागरण ऐसे उदाहरण हैं जिनसे भारतीय नवजागरण, व्यवहार और चिन्तन में आमूल चूल परिवर्तन दिखाई देता है। परन्तु भारतीय दर्शन के आधार सूत्र खंडित नहीं हुआ। निरन्तरता और परिवर्तन का क्रम भारतीय संस्कृति की विशेषता रही है। यह हमारी संस्कृति की गतिशीलता का परिचायक है। हमारी संस्कृति जैसी विविधता विश्व की किसी अन्य संस्कृति में नहीं है। हमारा देश में बोले जाने वाली भाषाओं और बोलियों की संख्या काफी है जो साहित्य को एक महान विविधता प्रदान करती है। विश्व के आठ महान धर्मों के लोग यहाँ भाईचारे के साथ मिलजुल कर रहते हैं। मूर्तिकला, चित्रकला, वास्तुकला, नृत्यकला, शास्त्रीय संगीत आदि के अनेक रुप विविधता में एकता का रुप उपस्थित करते है। अनेक त्यौहार, अनेक प्रथाऐं और अनेक ऋतुऐं भी हमारे देश की सांस्कृतिक विशेषता का ही अंग है। यह विविधता देश की संस्कृति की एक सॉझी बनाती है और हमारे देश को एक विविधता में एकता का रुप उपस्थित करती है।

संस्कृति का अर्थ है जीवन जीने का तरीका। आप का खाना, औढ़ना, पहनना, बात करने का ढंग अर्थात् भाषा, पूजा, प्रार्थना, आराधना के ढ़ंग यह सभी कुछ हमारी संस्कृति के ही परिचायक हैं। भारतीय संस्कृति उस पयस्विनी के समान है जो किसी हिमाच्छादित शैल खंड के अज्ञात स्थल बिंदु से जन्म ग्रहण कर अपनी जीवन यात्रा आरम्भ करती है और उस यात्रा के क्रम में नाना कालों में नाना दिशाओं से भाव और विचार, नीति और

आचार, धर्म और दर्शन, साहित्य और कला के अनन्त स्रोतों से अपने को परिपूर्ण बनाते हुए अपना प्रवाह अनवरत रखती है।[1] हमारी संस्कृति इसलिए भी अक्षुण्ण रही हैं क्योंकि हम पूर्व पीढ़ी के द्वारा किए गए काम को उपयोग में लाने के और उस पर आगे और निर्माण करने में सक्षम होते रहें हैं।[2] इस सतत् प्रक्रिया से आप अपने अवदान से भावी को समृद्ध करते चलते हैं।

भारतीय संस्कृति सद्भावपूर्ण और समन्वयात्मक है। इसका अर्थ है मेल, सारी जातियों का मेल, सारे कालों का मेल – यह मानव जाति के बेड़े को मंगल की ओर ले जाने वाली संस्कृति है।[3] इसके द्वारा मनुष्य के जीवन में विस्तार समृद्धि और गुणात्मक उच्चता आती है।[4] डॉ. सत्यकेतु विद्यालंकार के अनुसार, मनुष्य अपनी बुद्धि का प्रयोग कर विचार और कर्म के क्षेत्र में जो सृजन करता है उसको संस्कृति कहते हैं।[5]

संस्कृति और शिक्षा का घनिष्ठ सम्बन्ध है। गीता में लिखा गया है कि सा विद्या या विमुक्तये।[6] विद्या हमें संसार में सुख समृद्धि एवं सुयश प्रदान कराती है और ज्ञान का मार्ग दिखाकर हमें मोक्ष प्रदान कराती है। विद्या हमें माता के समान सुख पहुँचाती है, पिता के समान पथ प्रदर्शन करती है अर्थात् विद्या ज्ञान का वह स्रोत है जो हमारी उन्नति और पथ प्रदर्शन में सहायक होती है। प्रत्येक मानव समूह में हजारों वर्षों के विकास A.S. Altekar - From the Vedic Age downwards the central conception of education of the Indians has been that it is a source of illumination giving us a correct lead in the various spheres of life. अर्थात् वैदिक युग से लेकर आज तक भारत में शिक्षा का मूल तात्पर्य यह रहा है कि शिक्षा प्रकाश का स्रोत है, जो जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में हमारा सच्चा प्रदर्शन करता है।[7] शिक्षा मनुष्य का सर्वांगीण एवं सन्तुलित विकास करने वाली अन्तर्ज्योति और शक्ति है। भारतीय शिक्षा प्रणाली के अन्तर्गत शिक्षा छात्रों के सर्वांगीण विकास या व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं जैसे शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक एवं आध्यात्मिक का संतुलित विकास करती है। यह शिक्षा पद्धति आर्य संस्कृति की देन है। यह ज्ञान परम्परा एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक जाता है जैसे ज्ञान, धार्मिक, विश्वास, कला, कानून, नैतिक नियम, रीति–रिवाज, तौर–तरीके, साहित्य, संगीत, भाषा इत्यादि। हमारी प्रवृत्तियाँ, विश्वास और विचार, हमारे निर्णय और मूल्य, हमारी संस्थायें, राजनीतिक और कानूनी, धार्मिक और आर्थिक, हमारी विज्ञान, दर्शन और दार्शनिक ये सब और दूसरी बहुत सी चीजें तथा प्राणी स्वयं भी और अपने विविध सम्बन्धों में भी संस्कृति का महत्वपूर्ण योगदान है।

समाज की जैसी संस्कृति होती है उसी के अनुरुप शिक्षा की व्यवस्था की जाती है या ऐसे भी कह सकते हैं कि शिक्षा की रुपरेखा का निर्माण समाज की संस्कृति के अनुसार होता है। जैसे कि अगर समाज की संस्कृति में धर्म और आध्यात्मिकता की प्रधानता होती है तो, शिक्षा में शाश्वत मूल्यों की प्राप्ति पर बल दिया जाता है। इसके विपरीत यदि समाज की संस्कृति का स्वरुप भौतिक होता है तो शिक्षा द्वारा भौतिक उद्देश्यों की प्राप्ति का प्रयास किया जाता है। इसके विपरीत जिस समाज की कोई संस्कृति नहीं होती उसकी शिक्षा का स्वरुप भी अनिश्चित होता है। शिक्षा के सभी अंग – उद्देश्य, पाठ्यक्रम, अनुशासन आदि पर संस्कृति का प्रभाव पड़ता है। शिक्षा का उद्देश्य समाज के खानपान, रहन–सहन, आचार–विचार, दार्शनिक धाराओं, विश्वासों, आवश्यकताओं के आधार पर निर्मित होते हैं। इस प्रकार समाज की संस्कृति के आधार पर निर्मित होते हैं। इस प्रकार समाज की संस्कृति के अनुसार शिक्षा के उद्देश्य का निर्धारण होता है। समाज के विचार, विश्वास, मूल्य आदि को ध्यान में रखकर पाठ्यक्रम का निर्धारण किया जाता है। शिक्षक समाज की संस्कृति को अपनाकर चलता है, अपनी

संस्कृति को अपने शिक्षण की युक्तियों द्वारा फैलाता है। शिक्षक के विचारों के प्रभाव से ही बालक उसकी संस्कृति को अपनाते हैं। शिक्षण संस्थान समाज की संस्कृति का केन्द्र होते हैं। शिक्षण संस्थानों के समस्त कार्य समाज की प्रमुख विचारधाराओं के अनुकूल चलते हैं। समाज के नए नए रहने सहने के ढ़ंग फैशन, प्रवृत्तियों, रीति रिवाज यहीं पर फलते फूलते हैं।[8]

भारत में आधुनिक शिक्षा की नींव युरोपीय ईसाई धर्म प्रचारक तथा व्यापारियों के हाथों से डाली गई। उन्होंने कई विद्यालय स्थापित किए प्रारम्भ में मद्रास उनका कार्य क्षेत्र रहा। धीरे–धीरे कार्य क्षेत्र का विस्तार बंगाल में भी होने लगा। इन विद्यालयों में ईसाई धर्म की शिक्षा के साथ साथ इतिहास, भूगोल, व्याकरण, गणित, साहित्य आदि विषय भी पढ़ाए जाते थे। प्रायः 150 वर्षों के बीतते बीतते व्यापारी ईस्ट इंडिया कम्पनी राज्य करने लगी। जिसका ध्यान केवल राज्य विस्तार पर था और विस्तार में बाधा न पड़े। इस कारण ये शिक्षा के विषय में उदासीन ही रहे। कम्पनी ने 1781 में कलकत्ता में कलकत्ता मदरसा स्थापित किया। 1792 में जॉनथन डंकन बनारस में संस्कृत कॉलेज की स्थापना की। समय के चलते कम्पनी ने अपनी धर्म सम्बन्धी नीतियों में बदलाव करने लगी। उन्हें भारतीयों को शिक्षा देने की आवश्यकता अनुभव हुई। 1813 के आज्ञा पत्र के अनुसार उन्होंने शिक्षा के क्षेत्र में धन व्यय करने का निर्णय लिया। इस पर प्राच्य पाश्चात्य शिक्षा समर्थकों में मतभेद रहा। अंत में लार्ड मैकाले के तर्क वितर्क और राजा राममोहन राय के समर्थन से 1835 में लार्ड बैंटिक ने अंग्रेजी भाषा और साहित्य और युरोपीय इतिहास, विज्ञान आदि को पढ़ाने का निर्णय लिया गया। अंग्रेजी साम्राज्य के विस्तार के साथ साथ अधिक कर्मचारियों की और चिकित्सकों, इंजीनियर और कानून जानने वालों की आवश्यकता पड़ी। मैडिकल, इंजीनियरिंग और लॉ कॉलेजों की स्थापना होने लगी। स्त्रियों की दशा सुधारने और उनकी शिक्षा के लिए ज्योतिबा फूले ने 1848 में एक स्कूल खोला। यह इस प्रकार का पहला विद्यालय था। इस कर्म को दायित्व निर्वाह कुछ दिन करके उन्होंने अपनी पत्नी को इस कार्य के लिए तैयार कर दिया। विपरीत परिस्थितियों को झेलते हुए यह दम्पत्ति इस कार्य में लगे रहे। 1853, 1854 के विभिन्न समितियों ने शिक्षा सम्बन्धी निर्णय कम्पनी के पास भेजे।[9] अंग्रेजों द्वारा संस्कृत भाषा को प्रोत्साहन देने से संस्कृत का पुनः उद्धार और इसके माध्यम से प्राचीन साहित्य का प्रचार प्रसार आरम्भ हुआ।

शिक्षा सामाजिक और सांस्कृतिक विकास के लिए कार्य करती है। वास्तव में मानव का सामाजिक एवं सांस्कृतिक विकास शिक्षा द्वारा ही सम्भव हो पाता है। इसके साथ व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन का पुनर्निमाण होता है। इस तरह शिक्षा जीवन की मुख्य क्रिया है। संस्कृति शिक्षा को प्रभावित करती है और उसे नवीन रुप प्रदान करता है। किसी भी समाज का सांस्कृतिक पैटर्न उसकी शैक्षिक प्रणाली को निर्धारित करता है।

अशोक के समय में शिक्षा और साहित्य के क्षेत्र में भी काफी विकास हुआ। अशोक के समय का समाज शिक्षित समाज था। उन्होंने अपने धर्म सिद्धान्तों को शिलाओं तथा स्तम्भों पर खुदवा कर साम्राज्य के कोने–कोने में लगवा दिए थे ताकि लोग इन्हें पढ़कर उनके अनुसार अपना जीवन व्यतीत करें।[10] विद्यार्थी शिक्षा मठों तथा गुरुकूलों में प्राप्त करते थे जो तत्कालीन शासन द्वारा संचालित थे। इन गुरुकूलों में न केवल भारत अपितु विदेशों के विद्यार्थी भी शिक्षा ग्रहण करने आते थे। यहाँ वेद, बौद्ध, धार्मिक ग्रंथों, चिकित्सा, सैनिक विज्ञान, पशु विज्ञान, गणित एवं ज्योतिष शास्त्र आदि का अध्ययन करके विश्व में उस शिक्षा का प्रसार किया। अशोक के समय में पाली साहित्य की भी बहुत उन्नति हुई। कलिंग विजय के पश्चात् विजय अभियान को विराम देकर पड़ोसी देश लंका,

बर्मा और यवन देशों में बौद्ध धर्म के प्रसार के लिए भिक्षु भेजे। डॉ राधा कुमुद मुकर्जी के अनुसार, इस प्रकार अशोक के अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध ऐसे सिद्धान्तों पर आधारित थे जिन्हें आज संसार को स्वीकार करने की आवश्यकता है। उसको विश्वव्यापी भ्रातृत्व की भावना के मार्ग में बन्धन बाधा नहीं डाल सकते थे जो राष्ट्रों को एक दूसरे से पृथक कर देते हैं।[11]

दक्षिण पूर्वी एशिया के द्वीपों में भारतीय संस्कृति का बहुत अधिक प्रसार हुआ। वहाँ आज भी इन द्वीपों में भारतीय संस्कृति के चिह्न स्पष्ट रुप दिखाई देता है। इण्डोनेशिया पर शताब्दियों मुस्लिम शासन रहा, फिर भी यहाँ आज भी सुकर्णो तथा सुदर्शन आदि संस्कृत नाम प्रचलित हैं। बाली में जाति व्यवस्था आज भी विद्यमान है वहां के शिल्पी आज भी इन्द्र ,विष्णु एवं कृष्ण आदि हिन्दू देवताओं की मूर्तियॉ बनाते हैं।

डॉ. सम्पूर्णानन्द लिखते हैं कि निरन्तर प्रगतिशील मानव जीवन प्रकृति और मानव समाज के जिन–जिन असंख्य प्रभावों एवं संस्कारों से संस्कृत व प्रभावित होता है। मानव का प्रत्येक विचार, प्रत्येक कृति संस्कृति नहीं है। पर जिन कामों से किसी देश विशेष के समस्त समाज पर कोई अमिट छाप पड़े वही स्थायी प्रभाव ही संस्कृति है। संस्कृति वह आधारशिला है, जिसके आश्रय से जाति, समाज व देश का भव्य प्रासाद निर्मित होता है।[12]

कवि सुमित्रानन्दन पंत संस्कृति के सम्बन्ध में लिखते हैं – संस्कृति को मैं मानवीय पदार्थ मानता हूँ, जिसमें हमारे जीवन के सूक्ष्म स्थल दोनों धरातलों के सत्यों का समावेश तथा हमारे उर्ध्व चेतना–शिखर का प्रकाश और सामुदायिक् जीवन की मानसिक उपत्यकाओं की छायाऐं गुम्फित हैं। उसके भीतर अध्यात्म, धर्म, नीति से लेकर सामाजिक रुढ़ि, रीति तथा व्यवाहारों का सौन्दर्य भी एक अन्तर–सामञ्जस्य ग्रहण कर लेता है। संस्कृति को हमें अपने हृदय की शिराओं में बहने वाला मनुष्यत्व का रुधिर कहना चाहिए।[13]

संस्कृति का सम्बन्ध मानवीय बुद्धि स्वभाव और उसकी मनोवृत्तियों से होता हैं। इन्हीं तत्वों की सहायता से व्यक्ति अपना और अपने समाज का विकास करता है। संस्कृति साध्य और साधन दोनों का कार्य करती है। जब संस्कृति व्यक्ति तक सीमित रहती है तो व्यक्ति के व्यक्तित्व को प्रभावित करती है पर जब संस्कृति जाति और समाज तक प्रसार पा जाती है तो राष्ट्रीय चेतना को विकसित करती है। संस्कृति और शिक्षा किसी राष्ट्र के व्यक्तियों द्वारा प्रस्तुत ऐसा व्यवहार है जो भावी पीढ़ी के लिए आदर्श उपस्थित करती है उनके द्वारा अनुकरणीय होती है और समाज को शिक्षित करने के लिए साहित्य के नवीन रुप उपस्थित करती है।

भारतीय संस्कृति और साहित्य जिसका प्रसार सुदूर देशों तक है उसके मूल में भारतीय दर्शन, ज्योतिष और साहित्य शास्त्र की सुक्ष्मता और विश्लेषणात्मक तथ्य निरुपण विद्यमान हैं। इन गुणों के साथ इसमें आस्तिकता और आध्यामिकता का मिश्रण है। इन्हीं गुणों के कारण यह सार्वभौम होकर वैश्विक रुप से दिशा निदर्शन करती दिखाई देती है। भारतीय संस्कृति में जीवन के लौकिक और आलौकिक दोनों पक्षों की व्याख्या प्रस्तुत की गई है। लौकिक पक्ष को आध्यात्मिक उन्नति के साधन के रुप में स्वीकार किया जाता है। गीता का कर्म उपदेश सम्पूर्ण विश्व को निष्काम कर्म का उपदेश सीखा रहा है – नियतम् कुरु कर्म त्वं कर्म ज्यायो ह्यकर्मणः अर्थात् सकाम कर्म मानव को बन्धन में बांधते हैं और निष्काम कर्म उसे बन्धन मुक्त करते हैं। सकाम कर्म मानव को दुर्बल बनाते हैं और निष्काम कर्म उसे सबल।[14]

आधुनिक भारतीय युवा पूर्णतः पाश्चात्य सभ्यता के रंग में रंगा गया है। अपनी संस्कृति को त्याग कर भौतिक उन्नति और पूंजिवाद की ओर आकृष्ट हो रहा है। आज उसने भारतीय संस्कृति के मूल विशिष्टताऐं त्याग,

संतोष ज्ञान प्राप्ति की इच्छा को भूलकर आर्थिक और राजनीतिक कुचक्रों में फंस रहे हैं। परिणामस्वरुप विनाशकारी संघर्ष हो रहा है, विदेशियों के आक्रमण की सम्भावना बढ़ गई है। भारतीय संस्कृति के परिवर्तित होते रुप ने साहित्य को भी पूरी तरह से बदल दिया है। समकालीन वातावरण से प्रभावित कवि और लेखक अपनी प्राचीन मान्यताओं को ताक पर रख कर न जाने क्या लिख और परोस रहे हैं। साहित्य के इस बदले हुए रुप के कारण हमारी शिक्षा और संस्कृति का प्राचीन रुप आहत हो रहा है। विश्वगुरु बनने की अग्रसर भारत की सांस्कृतिक विरासत को हमें सहेजना होगा और इसके उत्थान के लिए प्रयत्नशील रहना होगा।

पंत लिखते हैं :–

आज वृहत् सांस्कृतिक समस्या जग के निकट उपस्थित,
खंड मनुजता को युग युग की होना नवनिर्मित,
विविध जाति, वर्गों, धर्मों को होना सहज समन्वित,
मध्य युगों की नैतिकता को मानवता में विकसित।

.....

व्यर्थ आज राष्ट्रों का विग्रह, औ तोपों का गर्जन,
रोक न सकते जीवन की गति शत विनाश आयोजन,
नव प्रकाश में तमस युगों का होगा स्वयं निमज्जित,
प्रतिक्रियाऐं विगत गुणों की होंगी शनै पराजित।[15]

संदर्भ सूची :-

1. एस. एल. नागौरी, ऐतिहासिक निबन्ध, पृ0 55
2. डॉ. उषा नागर, प्राचीन भारतीय संस्कृति, पृ0 1
3. डॉ. देवराज, संस्कृति का दार्शनिक विवेचन, पृ0 30
4. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, अशोक के फूल, पृ0 81
5. श्रीमद्भागवत्गीता, अध्याय 8 श्लोक 18
6. डॉ. किरण टंडन, भारतीय संस्कृति, पृ0 2
7. डॉ उषा नागर, प्राचीन भारतीय संस्कृति, पृ0 14
8. विकिपीडिया डॉट कॉम।
9. डब्ल्यु डब्ल्यु डब्ल्यु डॉट कॉम।
10. डॉ. महेन्द्र कुमार मिश्रा, भारतीय सभ्यता और संस्कृति, पृ0 116
11. वही, पृ0 117
12. डॉ. किरण टंडन, भारतीय संस्कृति, पृ0 2
13. डॉ किरण टंडन, भारतीय संस्कृति, पृ0 2–3
14. श्रीमद्भागवत्गीता, अध्याय 3 श्लोक 8
15. फेसबुक डॉट कॉम, कविता कोश।